वैदिक व्याख्यान माला — उन्नीसवाँ व्याख्यान

जनताका हित करनेका कर्तव्य

लेखक

श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

अध्यक्ष-स्वाध्याय-मण्डल, साहित्यवाचस्पति, गीतालंकार

स्वाध्याय-मंडल, पारडी (जि. सूरत)

मूल्य छः आने

ॐ

जनताका हित करनेका व्रत

राष्ट्रमें जो जनता है, उस जनताका हित होना चाहिये। मनुष्योंको ऐसा कर्म करना चाहिये कि जिससे रा में जो मानव समाज है, उसका कल्याण हो। सब जनोंका हित करना मानवोंका श्रेष्ठ कर्तव्य होता है। वैयक्तिक आचरण हो अथवा राष्ट्रका शासन हो, इसका परिणाम सर्वजनके हितमें ही होना चाहिये।

राष्ट्र एक पुरुष है।

राष्ट्र एक पुरुष है, संपूर्ण राष्ट्र मिलकर एक ही शरीर है, देखिये वेद कहता है—

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमिं विश्वतो वृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥१॥
यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते ॥११॥
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥१२॥

ऋ० १०।९०

'जिसके हजारों सिर, हजारों आंख, हजारों पांव हैं ऐसा एक पुरुष है, वह पृथ्वीपर चारों ओर व्यापता है इस पुरुषकी कैसी कल्पना की है? इसका मुख कौनसा, इसके बाहू, ऊरू और पांव कौनसे हैं? ब्राह्मस इसका मुख है, क्षत्रिय इसके बाहु हैं। वैश्य इसकी जांघें हैं और शूद्र इसके पांव हैं।'

राष्ट्ररूपी पुरुष है, उसके शरीरके सिर, बाहू, पेट, जांघें और पांव क्रमशः ज्ञानी, शूर, व्यापारी, कृषक और कर्मचारी ये हैं। इस तरह संपूर्ण राष्ट्रमें जितने मनुष्य हैं उन सबका एक ही राष्ट्रशरीर है, जिसके सिरके स्थानमें विद्वान हैं, बाहुओंके स्थानमें संरक्षक वीर हैं, व्यापारी पेटके स्थानमें है, कृषीकर्म करनेवाले जांघोंके स्थानमें हैं और कर्मचारी पांवोंके स्थानमें हैं। ये सब व्यक्तिशः पृथक् पृथक् दीखते हैं तथापि ये सबके सब राष्ट्र शरीरके अभिन्न अवयव हैं। व्यक्तिशः विभिन्नता दीखती है, पर राष्ट्र दृष्टिसे सब करोडों व्यक्तियां मिलकर एक ही राष्ट्र शरीर होता है। इसलिये जैसा व्यक्तिशः व्यक्तिका हित होना चाहिये वैसा ही राष्ट्रीय संघशः सब राष्ट्रके सब पुरुषोंका हित होना चाहिये। इस वैदिक विचार पद्धतिसे ठीक ठीक कल्पना हो सकती है कि राष्ट्रपुरुषका एक शरीर है, व्यक्तिशः भिन्नभाव होनेपर भी राष्ट्रीय दृष्टिसे राष्ट्रमें अभिन्न भाव अर्थात् एकताका भाव है, अनन्य भाव है। ये दोनों भाव मनुष्योंके समझमें आने चाहिये। ठीक तरह इनका ज्ञान होनेसे ही मनुष्य अपना कर्तव्य करनेमें अशुद्धि नहीं कर सकता।

व्यक्तिशः भिन्नता और राष्ट्रशः अनन्यता

व्यक्तिशः प्रत्येक मानव भिन्न भिन्न है, प्रत्येकके लिये रहना, स्नान भोजन आच्छादन आदि सब आवश्यकताएं पृथक् पृथक् चाहिये। इतनी भिन्नता होनेपर भी राष्ट्रीय दृष्टिसे इन सब करोडों प्राणियोंकी एकता अथवा अनन्यता निःसंदेह है। सब राष्ट्रको मिलकर कुछ बातें करनी चाहिये। इसलिये पूर्वोक्त मंत्रमें राष्ट्रको भी 'पुरुष' कहा है। यहां पुरुषका अर्थ व्यक्तिका शरीर है। जैसा व्यक्तिका शरीर होता है वैसा ही राष्ट्रपुरुषका भी एक ही शरीर होता है।

व्यक्तिका शरीर	राष्ट्रका शरीर
सिर	ब्राह्मण, ज्ञानीजन
बाहु	क्षत्रिय, रक्षकवीर
पेट	वैश्य, व्यापारी,
जांघें	,, कृषी करनेवाले
पांव	शूद्र, कर्मचारी
करोडों अणुजीव	करोडों मानव

मनुष्यके शरीरमें करोडों अणुजीव हैं, सिरस्थानमें करोडों, बाहुस्थानमें करोडों, पेट जंघा और पांवोंके स्थानमें करोडों सूक्ष्मजीव हैं। इनमेंसे सैकडों अणुजीव प्रतिक्षण मरते हैं और नये उत्पन्न होते हैं। साढेसात वर्षोंमें इस

तरह मनुष्यका संपूर्ण नया शरीर होता है। मानवी शरीरका प्रत्येक अणुजीव स्वतंत्र रीतिसे जन्मता, जीवित रहता और मरता है। इसके शरीरके अणुजीवोंके जन्म-रक्षण-मृत्युसे मानवी शरीरके जीवनमें कोई हेरफेर दृग्गोचर नहीं होता।

इसी रीतिसे राष्ट्रमें करोडों मानवी प्राणी रहते हैं, प्रति दिन हजारों जन्मते और हजारों मरते हैं। इनके जन्मने और मरनेसे राष्ट्र शरीरको कुछ भी न्यूनाधिक प्रतीत नहीं होता। यह व्यक्तिका शरीर और राष्ट्रका शरीर इन दोनोंमें समानता है। यह समानता बतानेके लिये ही पूर्वोक्त मंत्रमें 'पुरुष' शब्दका प्रयोग किया है। जिस तरह व्यक्तिका शरीर एक पुरुष है, यद्यपि उस शरीरमें करोडों अणुरूपी स्वतंत्र जीव हैं, उसी तरह राष्ट्रके शरीरमें भी करोडों मानव व्यक्तिशः स्वतंत्र होनेपर भी वे संघशः अनन्य हैं। यही अनन्यता प्रत्येक मनुष्यके समझमें आनी चाहिये। मनुष्य व्यक्तिशः स्वतंत्र है, परंतु राष्ट्रशः अथवा संघशः राष्ट्र और संघका हित करनेके लिये परतंत्र है। इस तरह व्यक्ति और राष्ट्रकी तुलना करनी चाहिये।

शरीरके अवयव

शरीरमें सिर, आंख, नाक, कान, मुख, हात, पांव, पेट-आदि अनेक अवयव हैं। ये अवयव सब शरीरका हित करनेके लिये उत्पन्न हुए हैं। इनको ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिये कि, जिससे शरीरका नाश हो जाय। इसी रीतिसे ज्ञानी, शूर, वीर, रक्षक, व्यापारी, कृषक, कर्मचारी, सुतार, लुहार, आदि जो राष्ट्रमें संघ हैं, वे सबके सब राष्ट्र शरीरके अवयव हैं, अतः इनको कभी ऐसा कोई कार्य करना नहीं चाहिये कि, जिससे राष्ट्रका हित न हो और राष्ट्रकी हानि हो जाय।

व्यक्तिके शरीरके अन्दरका कार्य देखनेसे राष्ट्रकार्यका ज्ञान इस तरह हो जाता है। यहां पाठकोंके ध्यानमें यह बात आ गई होगी कि सर्वजन हित करना प्रत्येक व्यक्तिका कर्तव्य है।

शरीरमें क्या हो रहा है ?

मनुष्यके सामने अन्न आ गया, हाथोंने अपनेमें उस अन्नको लिया और मुखके स्वाधीन किया, मुखने उसको चबाया, रसास्वाद भी जाना और उस सब अन्नको पेटके स्वाधीन किया, पेटने भी उसका रस और रक्त बनाया और सब शरीरमें घुमानेके लिये हृदयके पास दिया। हृदयने उस रक्तको सब शरीरमें घुमाया, इस तरह प्रत्येक अवयव सब शरीरके हितके लिये प्रमाद न करता हुआ कार्य करता है, इसलिये सब शरीर स्वस्थ रहता है। कोई एक अवयव अपने पास ही अन्न आदिको रखनेका स्वार्थ करेगा, तो सब शरीरका नाश होगा। देखिये पेटमें आया अन्न पेटने अपने पास ही रख दिया, तो अपचन होकर पेट फूलेगा और सब शरीरपर आपत्ति आ जायगी। राष्ट्रमें भी कोई एक स्वार्थ करता है तो उस एकके स्वार्थसे राष्ट्रपर भयानक संकट आ जाता है।

इस संक्षिप्त विवेचनसे पता लग सकता है कि सर्वजन हित करनेका भाव धारण करना चाहिये, केवल अपना ही स्वार्थ देकर राष्ट्रहितका नाश करना किसीको भी योग्य नहीं है। सबका हित करनेका कार्य किया, तो उसमें व्यक्तिका हित होता ही है, और किसीका नाश नहीं होता, परंतु एकके स्वार्थके बढ जानेसे उसका स्वार्थ राष्ट्रका घात करता है और राष्ट्रकी हानिसे सबकी ही हानि हो जाती है।

राष्ट्रहितके तीन भेद हैं

राष्ट्रमें ज्ञानी, शूर, व्यापारी और शिल्पी तथा वन्य ऐसे पांच प्रकारके लोग होते हैं। अर्थात् राष्ट्रका हित करनेका अर्थ इन पांचों प्रकारके मानवोंका हित करना है। इन पांचोंका हित करना यह एक प्रकार है। इसीका नाम 'पाञ्चजन्य' वेदमें है, दूसरा सर्वश्रेष्ठ नेताओंका हित विशेषतः करना है, इसको वेदमें 'नर्य' कहा है, नरोंका, नेताओंका, श्रेष्ठोंका जो हित करता है वह नर्य है और तीसरा प्रकार सर्व साधारण मर्त्योंका, सर्व साधारण जनताका हित करना है, इसको वेदमें 'मर्य' कहा है। ये तीनों प्रकार वेदके मंत्रोंमें अनेक स्थानोंपर कहे हैं। अब इन तीनोंका हम विचार करते हैं।

पञ्चजनोंका हित

ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र-निषाद अर्थात् 'ज्ञानी-शूर-व्यापारीकृषक-कर्मचारी-वन्य इन पांचों प्रकारके मानव संघोंका हित करना 'पांचजन्य' शब्दने वेदमें बताया है। पांचजनोंका हित करनेका कार्य बडा भारी उत्तरदायित्वके साथ होनेवाला है। देखिये—

ज्ञानी लोगोंको क्या चाहिये, शूरवीरोंकी तथा रक्षकोंकी आवश्यकता क्या है, व्यापारियोंका किसकी जरूरी है, किसानोंको कौनसे कष्ट हो रहे हैं, गोपालन हो रहा है वा नहीं, कर्मचारियोंको किसकी जरूरत है और वन्य जातियोंकी आवश्यकताएं कौनसी हैं, इसका ज्ञान प्राप्त करना और उनकी न्यूनताओंको दूर करना यह कार्य बडा भारी महत्वका है, जो यह करता है, उसको वेद 'पांचजन्य' कहता है, यह एक सन्मानकी पदवी वैदिक सभ्यतामें थी।

'पांचजन्य' पदका आज अर्थ 'शंख' अथवा 'मूढ मानव' हो गया है। परंतु वैदिक समयमें यह श्रेष्ठत्वदर्शक पदवी थी!

नरोंका हित

(नरति इति नरः) जो जनताका संचालन करता है, जो मानवी समुदायको श्रेष्ठ मार्गसे ले जाता है, जो सुपथसे मनुष्योंको चलाता है, वह नर है। यह नेता है। (न रमते इति नरः) जो स्वार्थी भोगोंमें रमता नहीं, वह नर है, जो जनताका सुख बढानेके लिये सेवाभावसे कार्य करता रहता है, वह नर श्रेणीका मनुष्य है। ऐसे श्रेष्ठ मानवोंका नेताओंका, संचालकोंका हित करना और इन नायकोंका हित होनेसे ये इनके अनुयायियोंका हित अवश्य ही करेंगे ऐसी जहां व्यवस्था होती है वह व्यवस्था 'नर्य' पदसे बतायी जाती है। यहां भी संघके संचालकने संघीयोंका हित साधन करना है। इससे भी सब जनोंका हित ही होता है। पर 'पांचजन्य' पद्धतिसे यह पद्धति भिन्न है।

मर्त्योंका हित

मरनेवालोंका नाम मर्य, मर्त, मर्त्य है। हीन दीन दुःखी अवस्थामें ये सडते रहते हैं, रोगोंसे पीडित, दारिद्र्यसे ग्रस्त, हीन अवस्थासे संत्रस्त जो होते हैं वे मर्त्य हैं, दुःखरूप अवस्थामें कष्ट भोगनेवाले ये होते हैं। इनको विशेषतः सुख पहुंचानेका कार्य जो करते हैं, उनका संकेत 'मर्य' है। इन मर्त्योंका सुख बढानेवाला, ऐसा इसका भाव है।

मानवोंका हित साधन करनेके ये तीन प्रकार हैं। वेदमंत्रोंमें इनका पृथक् पृथक् मंत्रोंमें वर्णन किया है, इसलिये हम भी इस निबंधको इन तीन विभागोंमें बांटकर, तीनोंका पृथक् पृथक् वर्णन करना चाहते हैं। इससे पाठकोंको इन तीनों रीतियोंका उत्तम बोध हो जायगा। और सर्वजन हितका साधन करनेकी वैदिक पद्धतिका भी ज्ञान हो जायगा।

*

पञ्चजनोंका हितसाधन

ज्ञानी, शूर, व्यापारी-कृषक, कर्मचारी तथा वन्य ये पांच प्रकारके लोग सब राष्ट्रोंमें होते हैं। भारतमें इन पांचोंको ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और निषाद नामोंसे वर्णन किया है। वेदस्मृति आदि ग्रंथोंमें इन शब्दोंसे इनका वर्णन होता है। राष्ट्र शब्दमें इन पांचोंका समावेश होता है। इन पांचोंका हित होना चाहिये, राष्ट्रशासनका मुख्य ध्येय ही यह है कि इन पांचोंका हित हो जाय।

ऋषिलोग पंचजनोंका हित करते थे

ऋषि लोग पांचों प्रकारके मानवोंका अर्थात् ज्ञानी, वीर, व्यापारी, कर्मचारी और वन्य लोगोंका हित करते थे। ऐसे पंचजनहितके कार्य करनेवालोंको वेद 'पाञ्चजन्य' पदवी देता है। अत्रि ऋषि इस तरहका पञ्चजनोंका हित करता था, इस कारण असुरसम्राटने उसको कारागृहमें अनुयायियोंके साथ प्रतिबंधमें रखा था। इसको जनताके नेता अश्विदेवोंने मुक्त करके छोड दिया, यह बात पाठक निम्नलिखित मन्त्रमें देख सकते हैं—

पंचजनोंके हितके लिये राज्यक्रांति

ऋषिं नरावंहसः पाञ्चजन्यं ऋबीसादत्रिं मुञ्चथो गणेन। मिनन्ता दस्योरशिवस्य माया अनुपूर्वं वृषणा चोदयन्ता॥ ऋ० १।११७।३

(वृषणा नरौ) बलवान् नेता अश्विदेवोंने (अनुपूर्वं) क्रमसे चलाये हुए (अशिवस्य दस्योः मायाः) अशुभ दस्यु असुर सम्राट्के कपट जालोंको जानकर और उनको नष्ट करके (पाञ्चजन्यं अत्रिं ऋषिं) पांचों जनोंका हित करनेके लिये सदा प्रयत्न करनेवाले अत्रि ऋषिको (गणेन सह) उसके अनुयायियोंके साथ (अंहसः ऋबीसात् मुञ्चथः) दुःख देनेवाले कारागृहसे मुक्त किया।

इस मंत्रका विचार करनेसे निम्नलिखित बातें स्पष्ट हो जाती है—

१ अशिवस्य दस्योः मायाः - अशुभ कार्य करनेवाले दस्यु चोर असुर राजाका राज्य था। इसका राज्यशासन प्रजाको कष्ट देनेवाला था।

२ पाञ्चजन्यः अत्रिः ऋषिः — पञ्चजनोंका हित

करनेकी इच्छा करनेवाला अत्रि ऋषि था। यह ऋषि असुर राज्यको नष्ट करके उस स्थानपर आर्यराज्य हो ऐसा चाहता था।

३ ऋषिः अत्रिः गणेन सह — अत्रि ऋषिके साथ उसके बहुत अनुयायी थे। इनके साथ रहकर असुरोंके विरोधमें अत्रि हलचल करता था।

४ ऋषीसात् मुंचथः — असुरोंने अत्रिको अनुयायियोंके साथ कारागृहमें बंदिस्थ रखा था। उसको लोगोंके अनुयायी अश्विदेवोंने छोड दिया।

इस तरहका वृत्तांत इस मंत्रसे ज्ञात होता है। यह वृत्तांत अन्धकार उषासूर्यपर रूपक है, या दूसरा कोई रूपक है, इसका विचार संशोधक करें। यहां 'पांचजन्यः अत्रिः' पंचजनोंका हित करनेवाला अत्रि है, यह मुख्य बात है। और इसमें भी पंचजनोंका हित करनेका उद्देश्य ऋषियोंका होता था, यही उपदेश यहां मिल रहा है इसीका मनन करना है। यह मंत्रमें असुर राज्यको उलटा कर आर्यराज्यकी वहां स्थापना करनेका ध्वनि स्पष्ट रूपसे दीख रहा है अर्थात् राज्यक्रान्ति करके पंचजनोंका हित करनेका राजकीय कार्यक्रम यहां है। पंचजनोंका हित करना है। इस कार्यके लिये आवश्यक होनेपर राज्यशासन भी बदलना आवश्यक हो तो बदलना ही योग्य है। अत्रिकी हलचल असुर राज्यके विरोधमें थी। और वह योग्य थी। अत्रिपुत्र रातहव्य ऋषिकी घोषणा इस विषयमें यह है—

आ यद् वां ईयचक्षसा मित्र वयं च सूरयः।
व्यचिष्ठे बहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये॥

ऋ० ५।६६।६

'हे दूर दृष्टिवालो, मित्रवत् आचरण करनेवालो तुम और हम सब विद्वान मिलकर विस्तृत बहुपाय्य स्वराज्यमें (पंचजनोंका हित करनेके लिये) प्रयत्न करते रहेंगे।'

अत्रि ऋषिने पंचजनोंका हित करनेके लिये जो हलचल चलायी थी, उसका परिणाम बहुपाय्य स्वराज्य शासन होनेमें हुआ। इससे पञ्चजनोंका हित करनेकी अभिलाषा और बहुपाय्य स्वराज्यका जो संबंध है वह राजकीय संबंध है यह बात ध्यानमें आ जायगी। तथा—

अग्निः ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः।
तमीमहे महागयम्। ऋ० ९।६६।२०; वा. य. ९

'(पांच-जन्यः) पञ्चजनोंका हित करनेवाला (पवमानः) अपनी और पंचजनोंकी पवित्रता करनेवाला (ऋषिः) ज्ञानी (अग्निः) अग्निके समान तेजस्वी (पुरोहितः) पुरोहित हो, लोगोंने अपना अग्रणी करके जो आगे रखा हुआ हो वह ऐसा हो, उस (महागयं तं ईमहे) महाभागको हम प्राप्त होते हैं, उसकी हम प्रशंसा करते हैं।'

यहां ऋषिको 'महा-गय' कहा है, महाभाग, महाशाल, महागृह, महाधन ये इसके अर्थ हैं। जिसके गुरुकुलमें अनेक विद्यार्थी पढते हैं। उनके पालन पोषणके लिये जिसका घर बडा है, जिसके पास धन भी बहुत हैं ऐसा आचार्य होना चाहिये। सेकडों ब्रह्मचारियोंकी पालना करनेवाला राष्ट्रका पुरोहित ऐसा होना चाहिये।

इसको यहां 'पांचजन्यः' कहा है। यह पंच जनोंका हित करता है। विद्यादान देकर यह जनताका हित करता है। विद्या पढानेसे भी पंचजनोंका हित होता है।

पंचजनोंका हित करनेवाला धन

धनसे भी पंचजनोंका हित होता है। इस विषयमें एक मंत्र यहां देखिये—

आ पश्चातान्नासत्या पुरस्तादाश्विना यातमधरादुदक्तात्। आ विश्वतः पाञ्चजन्येन राया यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ऋ. ७।७२।५

'हे सत्यस्वरूपी अश्विदेवो! आप पीछेसे, आगेसे, नीचेसे, ऊपरसे अथवा किसी भी दिशासे आओ, पर आते समय पांचों प्रकारके लोगोंका जिससे हित होता है, ऐसा ही धन लेकर आओ और तुम सब मिलकर हमारा संरक्षण सदा कल्याणकारक साधनोंसे ही करते रहो।'

यहां 'पाञ्चजन्येन राया' ये पद महत्त्वके हैं। पंचजनोंका जिस धनसे सदा हित होता है, ऐसा धन लाना चाहिये। यह विचारपूर्वक देखना चाहिये कि, इससे पंचजनोंका सच्चा हित होगा या नहीं। वही व्यवहार करना और वैसाही धन प्राप्त करना योग्य है। परंतु जिससे पंचजनोंमेंसे किसीकी भी हानि होती हो, तो वैसा व्यवहार करके धन कमाना योग्य नहीं है।

उदाहरणार्थ देखिये कि अपने देशमें कपडा बुननेवाले लोग हैं। यदि कोई व्यापारी उनसे कपडा न लेता हुआ, विदेशके कपडेका व्यापार करेगा, तो उसे धन तो मिलेगा,

परंतु वह देशके पंचजनोंका हित करनेवाला धन नहीं होगा। इस तरह अपने देशकी एक जातिकी हानि करनेवाला धन नहीं प्राप्त करना चाहिये।

इसी रीतिसे मद्यका व्यवहार करके जो धन कमाना है वह भी पंचजनोंमेंसे बहुतोंकी हानि करनेवाला है अतः ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिये।

इस कारण 'पाञ्चजन्येन राया' (पञ्चजन हितकारी धन) ये पद अत्यन्त महत्त्वके हैं। राष्ट्रमें निवास करनेवाले पांचों प्रकारके लोगोंका जो हित करनेवाला है वही धन प्राप्त करना चाहिये। यह वेदका उपदेश बडा बोधप्रद है। राष्ट्रीय अर्थशास्त्रका यह बडा भारी महत्त्वका सिद्धांत है।

पंचजनोंका हितकर्ता राजा

इन्द्र सब विश्वका राज्य करता है वह पंचजनोंका हित करता है। यही राजाका एक महत्त्वका कार्य है–

स वज्रभृद् दस्युहा भीम उग्रः सहस्रचेताः
शतनीथ ऋभ्वा। चम्रीषो न शवसा पांचजन्यो
मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती ॥ ऋ. १।१००।१२

'वह इन्द्र वज्र धारण करनेवाला, दस्युओं, चोरों, लुटेरोंका नाश करनेवाला (भीमः उग्रः) भयानक उग्रवीर है। वह (सहस्र-चेताः) अनेक प्रकारकी बुद्धियोंसे युक्त, (शतनीथ) सेकडों मार्गोंसे सिद्धिको प्राप्त करनेवाला अत्यंत तेजस्वी है। सोमके समान बल बढानेवाला और (पांचजन्यः) पंचजनोंका हित करनेवाला है। यह मरुतोंकी सेनाके साथ रहनेवाला इन्द्र हमारा संरक्षण करे।'

यह क्षत्रियका अथवा राजाका वर्णन है। राजा प्रजाका उत्तम रीतिसे संरक्षण करे। राष्ट्रमें जो पंचजन रहते हैं उन सबका हित हो ऐसा राज्यशासन करे। शत्रुओंका नाश करें, शस्त्रास्त्र अपने पास रखे। अनेक (सहस्र-चेताः) अनेक आयोजनाएं करें और (शत-नीथः) सेकडों मार्गोंसे पंचजनोंका संरक्षण और हित करे। किसी भी तरह प्रजाका अहित होने न दें। इस मंत्रने पंचजनोंका हित करना राजाका विशेष कर्तव्य है यह बताया है।

इन्द्र देवोंका राजा है, वह पंचजनोंका हित करता है। वैसा मानवोंका राजा करे। यह भाव यहां है। यही बात और एक मंत्रमें कही है वह मंत्र अब यहां देखिये–

एकं नु त्वा सत्पतिं पांचजन्यं जातं शृणोमि
यशसं जनेषु। तं मे जगृभ्र आशसो नविष्ठं
दोषा वस्तोर्हवमानास इन्द्रम् ॥ ऋ. ५।३२।११

'यह इन्द्र अकेला ही (सत्पतिं) सज्जनोंका पालन करनेवाला (पांचजन्यं) पंचजनोंका हित करनेवाला और (जनेषु यशसं जातं) सब जनोंमें यशस्वी करके प्रसिद्ध हुआ है ऐसा मैं सुन रहा हूं। इस प्रशंसनीय इन्द्रको दिन-रात अपनी उन्नतिकी इच्छा करनेवाले धारण करें, इसकी भक्ति करें।'

यह वर्णन आदर्श राजाका है। राजा सज्जनोंका उत्तम रक्षण और पालन करे, पंचजनोंका उत्तम रीतिसे हित करे, किसीकी हानि और उस हानिसे दूसरेका लाभ होने न दे। सबका योग्य रीतिसे कल्याण हो ऐसा राज्यशासन करे। इस तरहका जो राजा होगा, वही प्रजाजनोंमें यशस्वी राजा करके प्रसिद्ध होता है। प्रजाजन भी ऐसे राजाको सब प्रकारसे अपनी अनुकूल संमति देते रहें। इससे राजा और प्रजा इन दोनोंका कल्याण हो सकता है।

पंचजनोंकी अनुकूलतामें राजाका सामर्थ्य

यत् पांचजन्यया विशा इन्द्रे घोषा असृक्षत।
अस्तृणाद्बर्हणा विपोऽर्यो मानस्य स क्षयः ॥
ऋ० ८।६३।७

'जब (पांचजन्यया विशा) प्रजाके पांचों वर्गोंने इन्द्रके पास अपनी संमतियोंकी घोषणाएं भेजीं, अर्थात् उसको अपनी संमति दी, तब (बर्हणा अस्तृणात्) अपने महत्त्वसे उसने शत्रुओंका नाश किया और (विपः मानस्य) विद्वानोंके संमानका (सः अर्यः क्षयः) वह श्रेष्ठ राजा आश्रय-स्थान बना। अर्थात् उसे उत्तम संमान प्राप्त हुआ।'

राष्ट्रके पांचों वर्ग जब राजाको अनुकूल होते हैं तब वह राजा महाबलवान होता है। जिस राजाको राष्ट्रके पांचों प्रजाजनोंकी अनुकूलता प्राप्त होती है, उसका सामर्थ्य बढता है और वह राजा वैसा सामर्थ्य बढ जानेके कारण अपने सब शत्रुओंका नाश करनेमें समर्थ हो जाता है। अर्थात् जिस राजाके विरुद्ध सब प्रजा होती है, उस राजाका बल कम होता है, इस कारण उसके शत्रु बढ जाते हैं और वह राजपदसे भ्रष्ट भी हो जाता है। जिस राजाको सब प्रजाकी अनुकूलता प्राप्त होती है वही विद्वानोंके

संमानका आश्रयस्थान होता है। पंचजनोंकी अनुकूल संमतिसे राजाका सामर्थ्य बढ जाता है। यह राजकीय शासनशास्त्रका एक बडा सिद्धान्त यहां कहा है। वह सबको सर्वदा मननीय होने योग्य है।

प्रत्येकका संरक्षण

अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतसः पांचजन्यस्य बहुधा यमिन्धते। विशो विशो प्रविशिवांसं ईमहे स नो मुञ्चत्वंहसः ॥ अथर्व. ४।२३।१

'(प्रचेतसः प्रथमस्य पांचजन्यस्य) विशेष बुद्धिमान और पंचजनोंका हित करनेवालोंमें प्रथम स्थानमें रहने योग्य जो अग्निके समान तेजस्वी अग्रणी है, उसकी हम प्रशंसा गाते हैं। यह (विशः विशः प्रविशिवांसं) प्रत्येक प्रजाजनके साथ रहता है, वह हमें पापसे बचावे।'

पंचजनोंका हित करनेवाला (प्रचेताः) विशेष बुद्धिमान हो, (विशः विशः प्रविशिवान्) प्रत्येक प्रजाजनके साथ रहनेवाला पास रहकर प्रत्येक प्रजाजनका निरीक्षण करनेवाला, प्रत्येक प्रजाजनका निरीक्षणपूर्वक उत्तम हित करनेवाला जो शासक होता है वह प्रथम स्थानमें रहने योग्य और विशेष संमानके योग्य है। ऐसा जो शासक होगा उसका संमान सब प्रजा करे। यह शासक प्रजाजनोंको पापसे बचावे, लोगोंकी प्रवृत्ती पापकी ओर न हो ऐसा शासन करे, ऐसा राज्य चलावे कि जिससे लोगोंकी स्वाभाविक वृत्ती ही पाप करनेकी ओर न बढें, परंतु पुण्यकर्म करनेकी ओर बढे। जिसके राज्यमें पाप कम होते हैं वह उत्तम राज्य शासन है। और देखिये—

प्रभावी वक्तृत्व शक्ति

ससर्परीरभरत् तूयमेभ्योऽधि श्रवः पांचजन्यासु कृष्टिषु। सा पक्ष्या नव्यमायुर्दधाना यां मे पलस्तिजमदग्नयो ददुः ॥ ऋ. ३।५३।१६

'(पांचजन्यासु कृष्टिषु) पंचजनोंकी सब प्रजाओंमें (ससर्परी) भाषणोंके प्रसरणशील प्रभावसे (श्रवः तूयं अधि अभरत्) अन्न यश आदिको त्वरासे भर दिया। यह विद्या (पक्ष्या) पक्ष बनाती और (नव्यं आयुः दधाना) नवीन जीवन निर्माण करती है, पलस्ति और जमदग्नि इन विद्वानोंने यह विद्या मुझे दी।'

'ससर्परी' यह एक प्रभावी भाषणशैली, या वक्तृत्व शैली है। यह भाषण पद्धति पंचजनोंमें प्रजाकी उन्नतिकी आयोजना करनेके पक्ष बनाती है। और प्रजामें नवीन जीवन उत्पन्न करती है। पञ्चजनोंमें इस वक्तृत्व शक्तिसे नवजीवन उत्पन्न होता है और इससे वह प्रजा नानाविध कार्योंको करने लगती है, जिससे अन्न धन और यश प्रजाको प्राप्त होता रहता है।

पंचजनोंमें जो विद्वान और निपुणतासे वक्तृत्व करते हैं, वे अपनी नानाविध योजनाएं जनताके सामने रखते हैं। इससे अनेक उन्नतिके कार्य राष्ट्रमें शुरू होते हैं। वक्तृत्व करनेवाले पुरुष अपने अपने कार्यक्रम पंचजनोंके सामने रखते हैं और अपने अपने पक्षके लोग अपने कार्यक्रमोंको करते हैं और अन्न, धन और यश राष्ट्रमें बढाते जाते हैं।

इस तरह पंचजनोंका हित करनेके विषयमें वेदके अनेक मंत्रोंमें विविध पहलुओंसे बहुत ज्ञान कहा है वह सब मनन करने योग्य है।

राष्ट्रमें ज्ञानियोंका हित होना चाहिये, शूरवीरोंका कल्याण होना चाहिये, व्यापारी कृषकों और गोपालकोंका लाभ होना चाहिये, कर्मचारी वर्गोंकी उन्नति होनी चाहिये तथा वन्य जातियोंका भी लाभ होना चाहिये। किसीकी अवनति नहीं होनी चाहिये। जो ऐसा करते हैं उनकी पदवी 'पांचजन्य' है और यह संमानकी पदवी है।

'पांचजन्य' के विषयमें यहांतक विचार किया है इसका संक्षेपसे तात्पर्य अब हम यहां लिखते हैं–

१ पंचजनोंका हित साधन करनेके लिये ऋषिलोग राज्यक्रान्ति भी करते थे और उत्तम स्वराज्यकी स्थापना करते थे।

२ लोगोंका अग्रेसर नेता पंचजनोंका सच्चा हित करनेवाला बडा विद्वान हो।

३ राष्ट्रमें धन ऐसा आ जाय कि जो पंचजनोंका सच्चा हित करनेवाला हो, ऐसा धन कभी राष्ट्रमें न आवे कि जिससे राष्ट्रके लोगोंका नाश हो सकता है।

४ शस्त्रधारी क्षत्रिय वीर सहस्रों आयोजनाओंसे और सेकडों मार्गोंसे पंचजनोंका हित करे।

५ शूरवीर सज्जनोंका पालन करे और शत्रुओंको दूर करे।

६ पंचजनोंकी अनुकूलता जिसको मिलती है वह राजा बलवान बनता है और उसीका संमान होता है।

७ पंचजनोंका हित करनेवाला नेता प्रत्येकका हित करनेके लिये तत्पर रहे। सब जनोंका हित होता रहे ऐसा उत्तम कार्यक्रम रचा जाय।

८ पंचजनोंकी उन्नति करनेके लिये विद्वान वक्तृत्वसे अपने कार्यक्रम लोगोंके सामने रखें और उनको कार्यान्वित करके जनताका हित करते रहे।

९ पंचजनोंमें जो निकृष्ट स्थानमें होंगे उनका भी हित अच्छी तरह होना चाहिये। यह बात कार्यकर्ता लोग ध्यानमें रखें।

१० कोई एक वर्ग दूसरे वर्गको न दबावे, परंतु सब प्रजाजन सब प्रकारसे ऊंचे उठें। ऐसा कार्यक्रम राष्ट्रमें करना योग्य है।

राष्ट्रमें पांचों वर्गोंके लोग आनन्दप्रसन्न रहने चाहिये यह इसका तात्पर्य है। इन पांचों वर्गोंके मानवोंकी सेवा करना हरएकका कर्तव्य है। राजा और राजपुरुषोंका यह भाग्य है, कि इनको राष्ट्रके इतने लोगोंकी सेवा करनेका-राष्ट्रपुरुषकी सेवा करनेका भाग्य प्राप्त हुआ है। इसलिये राजा और राजपुरुष राष्ट्रके पंचजनोंकी सेवा करें, परंतु अधिकारके मदसे घमंड करके उन्मत्त न हों और कदापि अत्याचार न करें। मानवसमाज ईश्वरका रूप है और इसकी सेवा करनेसे मनुष्यका तारण होता है। मानव समाजरूपी नारायण सबके लिये संसेव्य है।

पंचजनभी मानव समाजरूपी समष्टिरूप नारायणकी ही सेवा अनन्यभावसे करें। ब्राह्मण ज्ञानदानसे, क्षत्रिय संरक्षण करनेसे, वैश्य व्यापारसे, कृषक खेती करके, कर्मचारी अपने कर्मोंसे तथा वन्य लोग वनके संरक्षण द्वारा जनतारूपी नारायणकी सेवा कर सकते हैं और इससे सब कृतकृत्य हो सकते हैं।

यहांतक पंचजनोंके हित करनेका विचार हुआ अब 'नर्य' का विचार करते हैं—

नरोंका हित करनेवाला 'नर्य'

नरोंका जो हित करता है। वह 'नर्य' (नरेभ्यः हितः) कहलाता है। यहां 'नर' शब्द है। 'नर' पद 'पुरुष' वाचक है, परंतु यहां पुरुषोंका ही हित करे और स्त्रियोंका हित न करें, यह भाव नहीं है। स्त्रीपुरुषोंका समानतया हित होना चाहिये। यही भाव यहां है। 'नर' पदका अर्थ ऐसा है—

(नरति इति नरः) जो नेतृत्व करता है वह नर है, जो दूसरोंको उत्तम मार्गसे ले जाता है, जो हीनमार्गसे नहीं ले जाता, वह नेता 'नर' पदसे बोधित होता है। (न रमते इति नरः) जो अपने ही स्वार्थके भोगोंमें रमता नहीं, परंतु सब पंचजनोंके हित करनेके कार्य करनेमें जो रमता है, वह 'न-र' है। अर्थात् नेता अर्थवाला 'न-र' पद है और भोगोंमें न फंसनेवालेके अर्थमें भी 'न-र' पद प्रयुक्त होता है। थोडे विचार करनेसे पाठकोंको विदित होगा कि, इस तरहके 'नर' समाजमें अथवा राष्ट्रमें थोडे ही होते हैं। इन नरोंका हित करनेसे वे स्वयं किसी तरह अपने भोगोंमें रमते नहीं और अपने पासके साधनोंसे अपने अनुयायियोंको सत्यमार्गसे चलाते हैं। इससे इन नरोंका हित तो होता ही है, परंतु इनके सहयोगसे राष्ट्रके अन्यान्य जनोंका भी हित होता है और इस रीतिसे सब राष्ट्रका कल्याण होता है। इसमें यह ध्यान रहे कि, 'एक नेता और उसके अनुयायियोंका मिलकर एक संघ' समझना चाहिये। ऐसे संघ राष्ट्रभरमें रहेंगे और नेताओंद्वारा उन सबका कल्याण होगा।

गांवमें विद्वानोंका संघ और उसका नेता, रक्षकोंका संघ और उसका नेता, व्यापारियोंका संघ और उसका नेता, कर्मचारियोंका संघ और उसका नेता इस तरह नेता लोग राष्ट्रमें होते हैं। उन सबका योग्य रीतिसे कल्याण होनेकी आयोजनाएं करनी चाहिये। यह एक राज्यशासनकी पद्धति है, जिसमें संघनेताओंके सहकार्यसे सब राष्ट्रका हित साधन करनेकी आयोजनाएं सिद्ध की जा सकती हैं। अब देखिये इसके विषयमें वेदमंत्र क्या कहते हैं—

प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः प्रदेवी एतु सूनृता।
अच्छा वीरं नर्यं पंक्तिराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः॥
ऋ. १।४०।३

'(ब्रह्मणस्पतिः प्र एतु) ज्ञानका पति यहां हमारे समीप आवे। (सूनृता देवी प्र एतु) सत्ययुक्त वाग्देवी हमारे साथ रहे। (देवाः) सब विबुध मिलकर (नः पंक्तिराधसं यज्ञं) हमारे पंक्तियोंसे सिद्धि देनेवाले यज्ञको (नर्यं वीरं अच्छ नयन्तु) सीधे नरोंका हित करनेवाले वीरके पास पहुंचा देवें।'

जो विशेष ज्ञानी होता है, वह ब्रह्मणस्पति कहलाता है, यही ब्रह्मज्ञानी है। यह ब्रह्मज्ञानी हमारे पास आजाय, और

'सूनृतादेवी' अर्थात् सत्य भाषणकी वक्तृत्व शक्ति हमारे पास आवे। ज्ञान हमें प्राप्त हो और सत्यभाषण करनेकी शक्ति हमारेमें रहे। ज्ञान और सत्यभाषण ये दो शक्तियां हैं। तीसरी यज्ञशक्ति है। यज्ञमें (१) विद्वुधोंका सत्कार, (२) आन्तरिक संघटना और (३) दीनताको दूर करना ये तीन कार्य होते हैं। ज्ञान, वीरता, धन और कर्मशक्तिकी हीनताके कारण चार प्रकारकी दीनताएं राष्ट्रमें होती हैं। इनको दूर करना यज्ञसे होता है। ज्ञान प्रसार, वीर्यसंवर्धन, व्यापार वृद्धि और कर्मकी कुशलताकी वृद्धि करनेसे यह दीनता दूर होती है। यह यज्ञ 'पंक्ति-राधस' अर्थात् समूहकी सिद्धि देता है, समूहके समूह सिद्धितक पहुंचाये जाते हैं। ऐसे यज्ञ (नर्यं वीरं) नरोंका हित करनेवाला जो वीर है, उसके पास पहुंचे। अर्थात् हमारे इस यज्ञसे नरोंका हित करनेवालोंका हित हो और वे अपने संघतक यह कर्म पहुंचा देवें। यहांके 'नर्य' पदका अर्थ ऐसा देते हैं –

१ सायन – मनुष्येभ्यो हितं। नरेभ्यो हितं।
(ऋ. १।४०।३)

२ दयानंद – नरेषु साधुं हितकारिणं।

'मनुष्योंका हित जो करता है वह नर्य कहलाता है। मनुष्यको ज्ञान प्राप्त हो, उसकी वाणीमें सत्य हो, वह कर्म ऐसे करे कि जिनसे दीनोंकी दीनता दूर हो और जिनसे संघको सिद्धि प्राप्त हो। मनुष्योंका हित करनेवालोंके सहकार्यसे ये कर्म होते रहें और उन कर्मोंके द्वारा इन नेताओंसे जनता लाभ उठावे।

त्वं आविथ नर्यम्॥ ऋ. १।५४।६
त्वं सत्य इन्द्र धृष्णुः एतान् त्वं ऋभुक्षा नर्य-स्त्वं षाट्॥ ऋ. १।६३।३

'तू नरोंका हित करनेवालेका संरक्षण करता है।' क्यों कि उसका संरक्षण होनेसे सब लोगोंका संरक्षण होता है।'

'हे इन्द्र! तू सत्यपालक है, शत्रुका (धृष्णुः) नाश करनेवाला है! तू (ऋभु-क्षाः) कर्मचारियोंका सुखसे निवास करनेवाला है, तू (नर्यः) नेताओंका हित करनेवाला है, मानवोंका हित करनेवाला है और तू (षाट्) शत्रुका पराभव करनेवाला है।' इस मंत्रमें मानवोंके हितके साथ किन गुणोंका समावेश होता है, वे गुण कहे हैं। सत्यनिष्ठा, शत्रुका घर्षण करनेकी शक्ति, शिल्पियोंका प्रतिपालन करनेकी शक्ति, शत्रुका नाश करनेकी शक्ति और इनके साथ मानवोंका अथवा नरोंका हित करनेकी शक्ति वीरमें हो, तो उससे मानवोंका हित हो सकता है।

यांभिः कुत्सं श्रुतर्यं नर्यं आवतम्। ऋ. १।११९
त्वं इन्द्र नर्यः यां अवो नृन्। ऋ. १।१२१।१२

'जिस शक्तिसे मानवोंका हित करनेवालेका रक्षण तू करता है।' 'हे इन्द्र! तू नरोंका हित करता है। और मानवोंका संरक्षण करता है।' मानवोंका हित करनेका आशय यही है कि, मानवोंका संरक्षण करना है। यही बात और देखिये—

नि काव्या वेधसः शश्वतस्कः हस्ते दधा नर्या पुरूणि। अग्निर्भुवत् रयिपती रयीणां सत्रा चक्राणो अमृतानि विश्वा॥ ऋ. १।७२

'(शश्वतः वेधसः) शाश्वत ज्ञानको प्राप्त करवाले विद्वानके काव्य वह (निकः) करता है। ऐसे विद्वानके गुण गाता है। साथ साथ (नर्या पुरूणि हस्ते दधानः) मानवोंका हित करनेवाले धनोंको अपने हाथमें धारण करता है। यह (रयीणां रयिपतिः भुवत्) धनोंका स्वामी होता है और (सत्रा) साथ साथ (विश्वा अमृतानि चक्राणः) सब अमरतत्वोंको अपने पास रखता है।'

जिनका ज्ञान शाश्वततत्वकी पहचान कर देता है वह उस ज्ञानके सामर्थ्यसे मानवी हित करनेवाले धनोंको हाथमें धारण करता है। यह इसलिये कि जिस मानवको जो चाहिये, वह धन तत्काल दिया जा सके। यह धनोंका स्वामी है और इनसे वह सब प्रकारके कल्याणके साधन, अमरत्वके साधन, प्राप्त करता है और लोगोंको भी देता है।

इस मंत्रमें (नर्या पुरूणि) नरोंका हित करवाले पर्याप्त धन हैं ऐसा कहा है। ये सब धन अपने पास रखने चाहिये और जिसको जो चाहिये वह धन उसको देना चाहिये। जिससे उसका उत्तम कल्याण हो सके। धन नेक प्रकारके हैं, ज्ञान, बल, धान्य, घर, कुशलता, निर्भयता आदि अनेक धन हैं। इनसे मनुष्य धन्य होता है इसलिये इनको धन कहते हैं। देखिये—

भूरीणि भद्रा नर्येषु बाहुषु॥ ऋ० १।१६६।१०

'वीरोंके बाहु मानवोंका हित करनेवाले हैं और उन बाहुओंमें बहुत कल्याण करनेवाले सामर्थ्य हैं।' यहां बाहुओंको 'नर्य' अर्थात् नरोंका हित करनेवाले करके वर्णन

किया है। जनताका हित वीरोंके बाहु करें यह इसका तात्पर्य है।

उत शंसा नर्या । ऋ० १।१८५।९

'तों द्यौ और पृथिवी (नर्या) मनुष्योंका हित करनेवाली हैं।' द्युलोक और भूलोक सब प्राणियोंका हित करते यह तो प्रत्यक्ष अनुभवकी ही बात है। तथा और देखो-

त त्यत् नर्यं नृतोऽप इन्द्र प्रथमं पूर्व्यं दिवि प्राच्यं कृतम्। यद् देवस्य शवसा प्रारिणा असुं रिणन्नपः। भुवद् विश्वमभ्यादेवं ओजसा विदादूर्जं शतक्रतुर्विदादिषम् ॥ ऋ० २।२२।४

' इन्द्र ! तुम्हारा वह कृत्य (नर्यं) सर्व नरोंका हित करनेवाला था, जो तुमने (प्रथमं पूर्व्यं) सबसे प्रथम और प्रारंभ किया था और जिसकी द्युलोकमें भी प्रशंसा हुई थी। वी सामर्थ्यसे जो तुमने शत्रुके प्राण हरण किये वह प्रशंसाय कार्य है। सब (अदेवं) देवोंका द्वेष करनेवालोंका तुमने बलसे पराभव किया, सेकडों कर्म करके अन्नाद भी प्राप्त किया।'

देवका द्वेष करनेवाले दुष्टोंका पराभव करना, शत्रुका नाश करना और सेंकडों कर्म करके अन्नादिको प्राप्त करना ये स वीरताके कर्म (नर्य) मानवोंका हित करनेवाले हैं इसलिये इनके करनेवालेकी बहुत प्रशंसा होती है।

इन्द्रस्तुजो वर्हणा आ विवेश नृवद् दधानो नर्या पुरूणि। ऋ० ३।३४।५; अथर्व २०।११।५

'इन्द्रने अपने विशेष सामर्थ्यसे शत्रु सैन्यमें प्रवेश किया और मानवोंके साथ रहनेवाले तथा मनुष्योंका हित करनेवाले अनेक सामर्थ्योंका धारण किया।' इन्द्र अपनी वीरता शत्रुसेनामें प्रवेश करता है और मानवोंका हित करनेवाले अनेक सामर्थ्य धारण करता है। मनुष्योंके लिये यह आदर्श है। मनुष्य अपने सामर्थ्यसे शत्रुकी सेनामें प्रवेश करे, शत्रुका नाश करे और मानवोंका हित करनेके हेतुसे अनेक सामर्थ्य अपनेमें धारण करे।

निःस्वार्थी कर्मचारी

विश्वानि शक्रो नर्याणि विद्वानपो रिरेच सखिभिर्निकामैः। अश्मानं चिद्येबिभिदुर्वचोभिः व्रजं गोमन्तं उशिजो विवव्रुः ॥
ऋ० ४।१६।६, अथर्व० २०।७७।६

' इन्द्र (विश्वानि नर्याणि) मानवोंका हित करनेके लिये जो जो कर्म करने चाहिये, उन सब कर्मोंको (विद्वान्) जानता है और इसलिये (निकामैः सखिभिः) निःस्वार्थी या निष्कामभावसे कार्य करनेवाले अपने कार्यकर्ता मित्रोंके साथ प्रयत्न करके (अपः रिरेच) जल प्रवाहोंको बहाया इशारेके शब्दोंसे शत्रुके किलोंको तोड दिया और गौओंके वाडोंको प्राप्त किया। '

यहां कहा है कि इन्द्र उन सब कर्मोंको जानता है कि, जो मानवोंके हित करनेके लिये करने होते हैं। तथा निष्काम भावसे कार्य करनेवाले अपने मित्रगणोंसे सब मानवोंकी भलाई करनेके लिये जलप्रवाहोंको बहाया। क्योंकि मानवोंका हित जल मिलनेसे ही हो सकता है। जल वह है कि जो (ज+ल) जन्मसे लय पर्यंत मानवोंके उपयोगमें आता है। जन्मसे मृत्युतक जो उपयोगी है वह मानवोंको सबसे प्रथम देना चाहिये।

यहां कर्मचारी कैसे होने चाहिये इस विषयमें बडा महत्त्वका भाव बताया है (नि+कामैः सखिभिः) जिनमें निष्काम भावसे सेवा करनेकी इच्छा है, स्वार्थभावसे जो कार्यका नाश नहीं करते, जो निष्कामसेवाभावसे कार्य करते हैं, तथा जो (सखिभिः समानख्यानैः) समान विचार धारण करनेवाले, एक विचारसे जो कार्य करते हैं, ऐसे कार्यकर्ताओंसे जनताके हितके कार्य कराने चाहिये। क्योंकि ये अपने निजी स्वार्थके कारण जनताके हितके कार्य बिगाडते नहीं हैं। कार्यकर्ता ऐसे हों।

यहां ' नि-कामैः सखिभिः ' ये पद बहुत ही महत्त्वके हैं। सार्वजनिक हितके (विश्वानि नर्याणि विद्वान्) सब कार्य कैसे करने चाहिये यह जो जानते हैं, उनको ही ऐसे कार्योंमें प्रयुक्त करना चाहिये। स्वार्थी लोग अपने लाभके लिये सर्वजन हितकारी कार्य बिगाड देंगे। इसलिये निष्काम भावसे कार्य करनेवाले इन कार्योंमें नियुक्त करने चाहिये। यह बडा ही महत्त्वका संदेश वेदने यहां दिया है। तथा और देखिये—

तमिद् व इन्द्रं सुहवं हुवेम यस्ता चकार नर्या पुरूणि। यो मावते जरित्रे गध्यं चिन् मक्षू वाजं भरति स्पार्हराधाः ॥ ऋ० ४।१६।१६

' जिसने (पुरूणि नर्या चकार) बहुत सर्वजन हितकारी कार्य किये, उस इन्द्रकी हम प्रशंसा गाते हैं । जिसने मेरे जैसेको भी स्पृहणीय धन और अन्न दिया । ' इन्द्रकी महिमा इसलिये बढ गयी कि उसने (पुरूणि नर्या चकार) बहुत ही लोकोंके हित करनेके लिये उद्योग किये हैं ।

इन्द्राय नरे नर्याय नृतमाय नृणाम् ।

ऋ० ४।२५।४

' यह इन्द्र (नरे) नेता है, लोगोंको सन्मार्गसे ले चलता है, (नर्याय) मानवोंका हित करता है और (नृणां नृतमाय) मानवोंमें सबसे श्रेष्ठ है । ' लोगोंका हित जो करते हैं, वे मानवोंमें श्रेष्ठ समझे जाते हैं, वे श्रेष्ठ होते हैं और वे लोगोंको उच्च मार्गसे चलाते हैं । ये गुण मनन करने योग्य हैं । देखिये और—

प्र ते पूर्वाणि करणानि विप्राऽऽविद्वाँ आह विदुषे करांसि । यथायथा वृष्ण्यानि स्वगूर्ताऽपांसि राजन्नर्याविवेषीः ॥ ऋ० ४।१९।१०

' हे विप्र राजन् हे ज्ञानी राजा ! (वृष्ण्या स्वगूर्ता नर्या अपांसि) तुमने बलवान् प्रशंसा होने योग्य लोक हितकारी कार्य (यथायथा अविवेषीः) जैसे जैसे किये, वैसे वैसे (ते पूर्वाणि करणानि) तेरे पूर्व समयमें किये कर्म (आ विद्वान्) जानकर (विदुषे करांसि प्र आह) यह कवि विद्वानको तुम्हारे उन कर्मोंका वर्णन कहता है । ' अर्थात् यह ज्ञानी राजा लोगोंका हित करनेके लिये बडे बडे प्रशंसनीय आप ही आप जिसकी प्रशंसा सब करते हैं, ऐसे उत्तम कर्म करता है । इन शुभ कर्मोंकी सब लोग प्रशंसा गाते हैं । यहां ज्ञानी राजा ' लोक हितकारी कर्म करता है ' ऐसा इन्द्रका वर्णन करके सूचित किया है कि, राजाको सदा ही जनताके हित करनेके लिये बडे बडे कार्य करने चाहिये । ये कर्म कैसे हों इस विषयमें मन्त्रके पद मननीय हैं ' (वृष्ण्या) ये कर्म बलसे बननेवाले हों, (अपांसि) व्यापक सर्वजन हितकारी कार्य हों, (स्व-गूर्ता) आप ही आप कर्मोंको देखनेसे ही उन कर्मोंकी लोग प्रशंसा करें ऐसे आश्चर्यकारक कर्म हों, (नर्या) मानवोंका हित करनेवाले कर्म हों । ' ये विशेषण कर्मोंका स्वरूप बता रहे हैं । यद्यपि यहां राजा कर्म करे ऐसा कहा है, तथापि केवल राजा ही कर्म करे ऐसा भाव यहां नहीं है । राजा तो अवश्य ही ऐसे जनहितके कर्म करे, परंतु जो अन्य लोग कर सकते हैं वे भी कर्म करें ऐसा भाव यहां है ।

पनित आप्यो यजतः सदा नो वर्धाघ्नः शंसं नर्यो अभिष्टौ ॥ ऋ० ५।४१।९

' (पनितः) स्तुत्यः (आप्यः) सबको पास जाने योग्य, (यजतः) पूज्य (नर्यः) मानवोंका हित करनेवाले कर्म करनेवाला जो बडा महात्मा है, वह (नः शंसं सदा वर्धान्) हमारी कीर्ति बढा देवे । ' मानवोंका हित करनेवाला स्वयं पवित्र और पूजनीय हो, केवल जनताका हित करना ही अपना ध्येय है, ऐसा वह माने और वह (आप्यः) आप्त पुरुष हो, सब उसके पास जांय और विश्वाससे अपने कष्टोंको उसके पास वर्णन करके कहे । जन हितकारी कर्मोंको करनेवाला मनुष्य ऐसा हो कि जो जनोंकी बातें सुनें और उनकी सहायता करें ।

कर्ता वीरं नर्यं सर्ववीरम् । ऋ० ६।२३।४

' सर्व जन हितकारी कर्म करनेवाला वीर हो, सब प्रकारके वीरोचित कार्य करनेवाला हो, ' डरनेवाला न हो ।

ततुरिर्वीरो नर्यो विचेताः श्रोता हवं गृणत ऊर्ग्यूतिः । वसुः शंसो नरां कारुधाया वाजी स्तुतो विदथे दाति वाजम् ॥ ऋ० ६।२४।२

' (ततुरिः) शत्रुका नाश करनेवाला (वीरः नर्यः) मानवोंका हित करनेवाला (विचेताः) विशेष बुद्धिमान (हवं श्रोता) पुकार सुननेवाला, (गृणतः उर्वि-ऊतिः) ज्ञानियोंका विशेष संरक्षण करनेवाला (वसुः) जनोंका उत्तम निवास करानेवाला अतएव (नरां शंसः) मनुष्योंके द्वारा प्रशंसाके योग्य (कारुधायाः) कारीगरों, शिल्पियोंका धारण पोषण करनेवाला (विदथे स्तुतः वाजी) युद्धमें प्रशंसा होने योग्य विशेष बलवान् ऐसा भद्र श्रेष्ठ वीर (वाजं दाति) अन्न बल और धन आदि देता है । ' यह मंत्र विशेष ही मननीय है । श्रेष्ठ पुरुषके अनेक लक्षण इस मंत्रमें दिये हैं । साधक अपने जीवनमें इन गुणोंको ढालनेका यत्न करें । जनताका हित करनेवालोंमें कौनसे गुण चाहिये उन गुणोंको इस मंत्रमें एक स्थानपर दर्शाया है । और देखो—

अभि नो नर्यं वसु वीरं प्रयतदक्षिणम् ।
धामं गृहपतिं नय ॥ ऋ० ६।५३।२

'(वीरं प्रयत दक्षिणं) वीर दान देनेवाले (वामं) वन्दनीय (नर्यं वसु) मानवोंका हितकारी धन देनेवाले (गृहपतिं अभिनय) गृहस्थीके पास हमें पहुंचाओ।' यहां गृहस्थीके कर्तव्य बताये हैं, गृहस्थी वीर हो, नरोंका हित करनेवाला हो, धन देनेवाला हो, सबके द्वारा वंदनीय हो। इसमें भी वह मानवोंका हित करनेवाला हो यह प्रमुखतया कहा है।

इन्द्रासोमा युवमंग तरुत्रमपत्यसाचं श्रुत्यं रराथे। युवं शुष्मं नर्यं चर्षणिभ्यः सं विव्यथुः पृतनाषाहमुग्रा ॥ ऋ० ६।७२।५

'हे इन्द्र और सोम! (युवं) तुम दोनों मिलकर (तरुत्रं) सबका तारण करनेवाला (श्रुत्यं) प्रशंसनीय और (अपत्य-साचं) सन्तानको भी साथसाथ देनेवाला धन (अंग रराथे) शीघ्र ही देते हैं। हे (उग्रा) शूर वीरो (युवं) तुम दोनों (पृतना-षाहं) शत्रुसेनाका पराभव करनेवाला और (नर्यं शुष्मं) मानवोंका हित करनेवाला बल (चर्षणिभ्यः सं विव्यथुः) मानवोंको देते हैं।'

यहां 'अपत्य-साचं तरुत्रं श्रुत्यं' ये तीन विशेषण धनके वर्णन करनेके लिये प्रयुक्त किये हैं। धन संतान देनेवाला हो। जगत्में हम देखते हैं कि, धनी लोगोंको संतान नहीं होता, और वे संतानके लिये तडफते रहते हैं। इसलिये धन ऐसे व्यवसायसे प्राप्त करना चाहिये कि, जिससे संतान होनेमें बाधा न हो। यह बात विशेष महत्वकी है। दूसरा पद 'तरुत्रं' है यह (तरु+त्रं) दुःखसे पार करके तारण करनेकी शक्ति बताता है। तैरकर पार होनेका भाव 'तरु' में है और 'त्र' का अर्थ रक्षण तथा तारण है। इसके साथ 'श्रुत्यं' पद भी मननीय है। चारों ओर जिससे प्रशंसा होती है, लोगोंद्वारा की गई प्रशंसा या स्तुति चारों ओरसे सुनाई देती है। धन ऐसा हो। जिससे निंदा होती है, ऐसा धन हमें नहीं चाहिये।

जनहितकारी वीर पुत्र

मा त्वे सचा तनये नित्य आ धङ्
मा वीरो अस्मन्नर्यो विदासीत् ॥ ऋ० ७।१।२१

'(नित्ये तनये) औरस पुत्रको (त्वे सचा) तू सहायक हो और (मा आ धङ्) हमारा नाश न कर, तथा (नर्यः वीरः) नरोंका हित करनेवाला पुत्र (अस्मत् मा विदासीत्) हमसे दूर न हो।' अर्थात् हमारा पुत्र जनताका, मानवोंका हित करनेके लिये प्रशंसनीय कर्म करता रहें और ऐसा पुत्र हमारे साथ रहे।

तीन कार्यकर्ता

एते द्युम्नेभिः विश्वं आतिरन्त मन्त्रं ये वारं नर्या अतक्षन्। प्र ये विशस्तिरन्त श्रोषमाणा आ ये मे अस्य दीधयन्नृतस्य ॥ ऋ० ७।७।६

'(ये नर्याः) जो मनुष्योंका हित करनेमें तत्पर रहनेवाले पुरुष (अरं मन्त्रं अतक्षन्) गुप्त आयोजनाको पर्याप्त रूपसे सिद्ध करते हैं, तथा (ये श्रोषमाणाः विशः) जो जनोंका आवाज सुननेवाले प्रजाजन (प्रतिरन्त) दुःखपार होनेका कार्य करते हैं और (मे ये अस्य ऋतस्य आ दीधयन्) मेरे जो मित्र इस सत्यभावको संवर्धित करते हैं, (एते) ये लोग (द्युम्नेभिः) तेजस्वी मार्गोंसे (विश्वं आ तिरन्त) सब विश्वको सुखी करते हैं, दुःखसे पार करते हैं।

यहां तीन प्रकारके कार्य कर्ताओंका वर्णन है। (नर्याः मन्त्रं अतक्षन्) मानवोंका हित करनेवाले गुप्त अथवा मनन करने योग्य आयोजनाओंको सिद्ध करते हैं। विचार पूर्वक आयोजना मानवोंके हितके लिये तैयार करते हैं और उसको सिद्ध करते हैं। ये (१) एक प्रकारके लोग हैं। (२) दूसरे (श्रोषमाणाः विशः प्रतिरन्त) प्रजाकी पुकार सुननेवाले लोग दुःखसे पार होनेका यत्न करते हैं। प्रजाकी पुकार सुनते हैं और उनको दुःखसे पार ले जाते हैं। (३) तीसरे (ऋतस्य आदीधयन्) सत्य मार्गको प्रकाशित करते हैं। ये तीन प्रकारके लोग जनताका हित करनेवाले हैं और ये ही सब जगत्को दुःखसे पार करके सुखी करते हैं।

उग्रो जज्ञे वीर्याय स्वधावान् चक्रिरपो नर्यो यत्करिष्यन्। जग्मिर्युवा नृषदनमवोभिः त्राता न इन्द्र एनसो महश्चित् ॥ ऋ० ७।२०।१

'(स्व-धा-वान्) निज धारणा शक्तिसे युक्त (उग्रः) प्रचण्डवीर (वीर्याय जज्ञे) पराक्रम करनेके लिये ही उत्पन्न हुआ है। यह (नर्यः) मानवोंका हित करनेके लिये (यत् करिष्यन्) जो करना चाहता है वह (अपः चक्रिः) कर्म करके छोडता है। यह (युवा) तरुण (अवोभिः नृषदनं जग्मिः) संरक्षण करनेके साधनोंके साथ मानवोंके घरोंके

पास जाता है, यह इन्द्र (महः एनसः नः त्राता) बडे पापसे हमारा तारण करता है। '

यह वीर अपनी शक्ति बढाता है, वीर्यके प्रचण्ड कार्य करता है। मानवोंका हित करनेके लिये जो कर्म करनेकी आवश्यकता उत्पन्न होती है, वे सब कर्म वह विना प्रमाद कर छोडता है। वह तरुण जैसा नित्य उत्साही वीर अपने साथ संरक्षणोंके साधन लेकर मानवोंके घरोंके समीप जाता है और उनका संरक्षण करता है। सार्वजनिक हितके कार्य करनेवालेको प्रथम अपनी निज शक्ति बढानी चाहिये। जिससे वह सर्वजन हितकारी कर्म कर सके। उसकी निज शक्ति बढनेपर वह (अवोभिः) अपने पास संरक्षण करनेके साधन एकत्रित करे और उन रक्षक साधनोंके साथ वह प्रजाजनोंके तथा अनुयायियोंके निवास स्थानोंमें भ्रमण करके उनकी अवस्था देखे और उनका संरक्षण करनेके लिये जो करना चाहिये वह योग्य रीतिसे करे।

वीर पुत्रका निर्माण

वृषा जजान वृषणं रणाय तमु चिन्नारी नर्यं ससूव। प्र यः सेनानीरध नृभ्यो अस्तीनः सत्वा गवेषणः स धृष्णुः॥ ऋ० ७।२०।५

' (वृषा) बलवान पिताने (रणाय) युद्ध करनेके लिये ही (वृषणं) बलवान् पुत्रको (जजान) निर्माण किया है। (नारी) माताने भी (तं उ चित् नर्यं) उसी मानवोंका हित करनेमें तत्पर रहनेवाले पुत्रको (ससूव) जन्म दिया। (अध) और (सः) वही वीर (सेनानीः) सेनाका संचालन करनेवाला (सत्वा) बलवान्, (गवेषणः) गौओंकी प्राप्ति करनेवाला (धृष्णुः) शत्रुका पराभव करनेवाला और (नृभ्यः इनः प्र अस्ति) मानवोंके लिये शासन कर्ता जैसा होता है। '

पिता और माता दोनों अपना पुत्र बलवान, युद्धमें विजयी, जनताका कल्याण करनेवाला, सेनापति, बलवान शूर शत्रुका पराभव करनेवाला और शत्रुने चुराई गौवोंको वापस लानेवाला हो ऐसा चाहती है। और दोनोंकी वैसी प्रबल इच्छा होनेके कारण ऐसे मातापिताओंको ऐसा ही वीर पुत्र उत्पन्न होता है।

यहां उत्तम सुसंतान उत्पन्न करनेकी विधि बताई है। पिता और माता दोनों ऐसा पुत्र निर्माण हो ऐसी इच्छा धारण करें, साल छ मास व्रत धारण करके रहें। पश्चात् सहवास होनेपर ऐसा ही पुत्र उत्पन्न होगा। यह मंत्र इस दृष्टिसे मननीय है। ' वृषा जजान ' बलवान् पिताने पुत्रको जन्म दिया। और ' नारी ससूव ' माताने पुत्रका प्रसव किया। ये दोनों वाक्य बताते हैं कि उत्तम पुत्र निर्माण करनेमें माता पिता दोनोंका भाग रहता है। मुझे इस तरहका पुत्र हो यह प्रबल इच्छा अधिक मास तक दोनोंमें रहना, दोनोंका व्रतस्थ रहना और एक ही इच्छासे मातापिता दोनोंका मन प्रभावित रहना यहां आवश्यक है।

इस मंत्रमें दिये (वृषणं) बलिष्ठ (रणाय) युद्ध करनेवाला, युद्धमें प्रवीण, (नर्य) मानवोंका हित करनेवाला, (सेनानी) सैन्यका संचालन करनेमें प्रवीण, (सत्वा) बलवान्, सत्ववान्, (धृष्णुः) शत्रुको जीतनेवाला ये विशेषण मननीय हैं। पुत्र ऐसा हो।

आ ते मह इन्द्रोत्युग्र समन्यवो यत् समरन्त सेनाः। पताति दिद्युन्नर्यस्य बाह्वोर्मा ते मनो विश्वद्र्यक् विचारीत्॥ ऋ० ७।२५।१

' हे (उग्र इन्द्र) वीर इन्द्र! (यत् स-मन्यवः सेनाः) जब समान उत्साहवाली सेनाएं (समरन्त) एक दूसरेपर हमला करती हैं, तब (नर्यस्य ते बाह्वोः) नरोंका हित करनेवाले तेरे बाहुओंसे (दिद्युत् ऊती पताति) तेजस्वी शस्त्र संरक्षण करनेके लिये ही शत्रुपर गिरता है। (ते मनः) तेरा मन (विश्वद्र्यक् मा वि चारीत्) इधर उधर न भटकता रहे।'

यहां यह इन्द्र नरोंका हित करनेवाला है। और वह इसी लिये युद्ध करता है, ऐसा कहा है। बालकको मानवोंका हित करनेकी दीक्षा देनेके विषयमें अगले मंत्रमें देखिये—

मातापिताकी शरीरकी पवित्रता

स वावृधे नर्यो योषणासु वृषा शिशुर्वृषभो यज्ञियासु। स वाजिनं मघवद्भ्यो दधाति वि सातये तन्वं मामृजीत॥ ऋ० ७।९५।३

' (नर्यः) नरोंका हित करनेवाला (वृषा वृषभः शिशुः) बलशाली समर्थ पुत्र अथवा वह बालक (यज्ञियासु योषणासु वावृधे) पूज्य स्त्रियोंमें रहता हुआ बढता है। वह (मघवद्भ्यः वाजिनं दधाति) सत्कर्म करनेवालोंको बलवान् पुत्र देता है और सुसंतान होनेके (सातये तन्वं वि

मामृजीत) लाभके लिये उनके शरीरोंपर उत्तम विशेष रीतिके सुसंस्कार करता है।'

सुसंतति होनेके लिये मातापिताके शरीरोंपर शुभ संस्कार करने चाहिये, शरीरकी और मनकी परिशुद्धता करनी चाहिये। इससे बलवान पुत्र उत्पन्न होता है, जो पवित्र स्त्रियोंमें रहकर बढता है और वह युवा होनेपर मानवोंका हित करनेके कार्य करता है।

मानव हितकारी रथ

ऋभुओंका रथ मानवोंका हित करनेवाला है, इस विषयमें यह मंत्र देखिये–

आ वो अर्वाचः क्रतवो न यातां विभ्वो रथं नर्यं वर्तयन्तु ॥ ऋ.७।४८।१

'(न) अब (यातां वः) आपके जानेके समय (विभ्वः क्रतवः) विशेष प्रभावी कर्म करनेवाले तुम्हारे घोडे (नर्यं रथं) मानवोंका हित करनेवाले रथको (आ वर्तयन्तु) हमारे पास ले आवें।'

अर्थात् तुम्हारा रथ सब मानवोंका हित करनेके लिये पृथ्वीपर भ्रमण कर रहा है, वह हमारे समीप आकर हमारा भी हित करे। मानवोंका हित करनेवाला रथ इसका भाव यह है कि, रथमें मानवोंके उपयोगके पदार्थ रहते हैं, जो लोगोंको मिलते हैं और सब लोगोंका कल्याण उनके उपयोग करनेसे होता रहता है।

हितकारी धन

आ देवो यातु सविता सुरत्नोऽन्तरिक्षप्रा वहमानो अश्वैः। हस्ते दधानो नर्या पुरूणि निवेशयञ्च प्रसुवञ्च भूम ॥ ऋ० ७।४५।१

'(सु-रत्नः) उत्तम रत्नोंका धारण करनेवाला (अन्तरिक्षप्राः) अन्तरिक्षको अपने प्रकाशसे भर देनेवाला और (अश्वैः वहमानः) अश्वोंद्वारा जिसका रथ चलाया जा रहा है, वह सविता देव (आ यातु) हमारे पास आ जावे। वह (पुरूणि नर्या) बहुत प्रकारके मानवहितकारी धनोंको (हस्ते दधानः) हाथमें धारण करनेवाला और (भूम) सब भूतोंको (निवेशयन्) योग्य स्थानपर रखनेवाला और (प्रसुवन्) कर्ममें सबको प्रेरणा करनेवाला है।'

यहां सूर्यको 'नर्य' अर्थात् मनुष्योंका हित करनेवाला कहा है। यह धन देता है, प्रकाश फैलाता है, दिनमें सबका उत्साह बढाता है और सबका कल्याण करता है। और देखिये—

भीमो विवेषायुधेभिरेषां अपांसि विश्वा नर्याणि विद्वान्। इन्द्रः पुरो जर्हृषाणो वि दूधोद् वि वज्रहस्तो महिना जघान ॥ ऋ० ७।२१।४

'यह इन्द्र (नर्याणि विश्वा अपांसि विद्वान्) मानवोंका हित करनेवाले सब कर्मोंको जानता है और इस कारण (भीमः) भयानक वीर होकर (आयुधेभिः) शस्त्रोंसे (एषां) इन शत्रुओंको (विवेष) घेरकर मारता है, अन्दर घुसकर मारता है। उनके (पुरः विदूधोत्) नगरोंको हिला देता है और (जर्हृषाणः) आनन्दसे (महिना वज्रहस्तः जघान) अपनी शक्तिसे हाथमें शस्त्र लेकर शत्रुका वध करता है।'

यहां कहा है ,कि यह वीर मानवोंके हित करनेवाले कर्मोंको कैसा करना चाहिये, यह सब यथावत् जानता है। अतः वह शस्त्रोंके साथ शत्रुकी सेनामें घुसता है और उनको मारता है, शत्रुके नगरोंको पादाक्रान्त करके उनपर अपना अधिकार जमाता है। इस तरह शत्रुका नाश करके लोगोंका हित करता है।

नू मर्तो दयते सनिष्यन् यो विष्णव उरुगायाय दाशत्। प्र यः सत्राचा मनसा यजात एतावन्तं नर्यं आविवासात् ॥ ऋ० ७।१००।१

वह (मर्तः सनिष्यन् दयते) मनुष्य धनकी इच्छा करता है और धन प्राप्त करता है। (यः उरुगायाय विष्णवे दाशत्) जो अनेकोंद्वारा प्रशंसित हुए विष्णुको अर्पण करता है। (यः सत्राचा मनसा प्र यजाते) जो एकाग्र मनसे उसका यजन करता है और जो (एतावन्तं नर्यं आविवासात्) इस तरहके मानवोंका हित करनेवाले देवका सत्कार करता है।'

जो व्यापक प्रभुकी मनसे उपासना करता है, उसकी पूजा करता है, उसको सब प्रकारका ऐश्वर्य मिलता है। यह प्रभु मानवोंका हित सदा सर्वदा करता रहता है।

ज्येष्ठेन सोतरिन्द्राय सोमं वीराय शक्राय। भरा पिबन् नर्याय ॥ ऋ० ८।२।२३

'(वीराय शक्राय) वीर सामर्थ्यवान् (नर्याय इन्द्राय) नरोंका हित करनेवाले इन्द्रके लिये सोम दो।' यहां इन्द्रको

' नर्य ' अर्थात् मानवोंका हित करनेवाला करके कहा है। इन्द्र शत्रुका पराभव करके मानवोंका अधिकसे अधिक हित करता है। इस कारण उसकी प्रशंसा होती है।

उद्वेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम्।
अस्तारमेषि सूर्य ॥ ऋ० ८।९३।१; अथर्व० २०।७।१

' हे सूर्य ! तू ही (श्रुत-मघं) प्रशंसित धनसे युक्त (वृषभं) बलवान (अस्तारं) दाता और (नर्य-अपसं) मानवोंका हित करनेके लिये ही कर्म करनेवालेके समीप (उत् अभि एषि) पहुंचता है।'

यहां ' नर्य-अपसं ' यह पद मुख्य है। मानवों या नरोंका हित करनेके लिये जो कर्म करने आवश्यक हैं उन कर्मोंको करनेवाला, यह इसका अर्थ है। ' अपस् ' का अर्थ भी व्यापक लाभ करनेवाले कर्म ऐसा है। जिस कर्मका लाभ सर्व साधारण तक पहुंचता है, उस कर्मको 'अपस्' कहते हैं। ऐसे कर्म करनेवाला जनताका हित करनेके लिये ऐसे कर्म करने चाहिये, यह उपदेश यहां है। और देखिये-

स वृत्रहेन्द्र ऋभुक्षाः सद्यो जज्ञानो हव्यो बभूव।
कृण्वन्नपांसि नर्या पुरूणि सोमो न पीतो हव्यः
सखिभ्यः ॥ ऋ० ८।९६।२१

(वृत्र-हा ऋभु-क्षाः स इन्द्रः) वृत्रादि असुरोंका नाश करनेवाला, शिल्पियोंका संरक्षण करनेवाला वह इन्द्र प्रकट होते ही तत्काल प्रार्थनीय होता है। (सखिभ्यः हव्यः) मित्रोंके लिये सहायक और (पुरूणि नर्या अपांसि कृण्वन्) बहुत लोगोंका हित करनेवाले अनेक कर्म करता है। जिस तरह पीया सोम आनंद देता है वैसा यह वीर सबको आनंद देता है।'

यहां बताया है कि जनहितके अनेक विध कर्म होते हैं। उनमें शत्रुका नाश करना, शिल्पियोंकी पालना करना, समान विचारवालोंका आदर करना और जो जनहितके लिये आवश्यक कर्म होंगे, उन कर्मोंको करना चाहिये। यह एक बडा भारी कार्यक्रम इस मंत्रने बताया है।

सखेव सख्ये नर्यो रुचे भव।
ऋ० ९।१०५।५

' मित्र जिस तरह मित्रका सहायक होता है वैसा तू सब मानवोंका हित करनेवाला बन और उनका तेज बढाओ।' लोकोंका हित करना और उनका तेज बढाना चाहिये।

मानवोंमें श्रेष्ठ

नृणां नर्यो नृतमः।
ऋ० १०।२९।१; अथर्व० २०।७६।१

' (नृणां) मानवोंमें (नृतमः) श्रेष्ठ नेता, श्रेष्ठ मनुष्य (नर्यः) मानवोंका हित करता है।' जो मानवोंका हित करनेमें अपना जीवन अर्पण करता है, वह मनुष्योंमें श्रेष्ठ समझा जाता है।

स वावृधे वरिमन्ना पृथिव्या अभि क्रत्वा
नर्यः पौंस्यैः ॥ ऋ० १०।२९।७; अथर्व २०।७६।७

' वह (पृथिव्याः वरिमन्) पृथिवीके ऊपर (क्रत्वा) अपने कर्मसे और (पौंस्यैः) पराक्रमोंसे (नर्यः) मानवोंका हित करनेवाला (अभि आ ववृधे) बढ रहा है।' पृथ्वीपर जो वीर विशेष सार्वजनिक हित करनेके कार्य करता है और विशेष पराक्रम करता है, उसका यश चारों ओर फैलता है और इस कारण उसको श्रेष्ठपद प्राप्त होता है।

सो चिन्नु सख्या नर्य इनः स्तुतः। ऋ० १०।५०।२

' वह वीर सबके साथ मित्रवत् व्यवहार करनेसे सर्वत्र प्रशंसित होता है और सब मानवोंका (नर्यः) हित करनेके कारण वही (इनः) सबका शासक होता है।' अर्थात् जो सबका हित करता है, उसीको राज्यके शासकके स्थानपर सर्व संमतिसे सब लोक चुनते हैं। नरोंका हित करनेवाला ही राज्यका शासक होता है क्योंकि वह सबके साथ (सख्या) मित्रके समान आचरण करता है।

जनिष्टो···नर्यः सुजातः। ऋ० १०।९५।१०

' उत्तम कुलमें यह उत्पन्न हुआ जो (नर्यः) मानवोंका हित करता है।' उत्तम श्रेष्ठ कुलमें जो उत्पन्न हुआ है उसको मानवोंका हित करनेका कार्य अवश्य करना चाहिये। नहीं तो श्रेष्ठ कुलमें उत्पन्न होनेसे कौनसा लाभ है ?

भर्ता यो वज्रं नर्यं पुरुक्षुः। ऋ० १०।७४।५

' जो बहुत प्रशंसित इन्द्र वीर है, वह (नर्यं वज्रं) मानवोंका हित करनेवाला वज्र धारण करता है।' यहां वज्रको भी मानव हितकारी करके वर्णन किया है। शूरके बाहु, शस्त्र अस्त्र, बल ये सबके सब मानवोंका हित करनेवाले हैं। अर्थात् ये युद्धके साधन मानवी हित करनेमें प्रयुक्त होने चाहिये।

अस्मांस्त्रायस्व नर्याणि जाता अथो यानि गव्यानि पुष्ट्या ॥ अथर्व १९।४९।३

' हमारा संरक्षण कर, वहां (नर्याणि) मानवोंका हित करनेके कार्य किये हैं और (गव्यानि) गौओंका हित करनेके कार्य किये हैं और (पुष्ट्या) सबकी पुष्टी करनेके कार्य किये गये हैं । '

इस मन्त्रमें ' नर्य ' पद मानवोंका हित करनेके कार्य दर्शाता है और ' गव्यानि ' पद गौओंका हित करनेके कार्य बताता है । अर्थात् मानवोंका हित जैसा करना चाहिये वैसा ही गौओंका भी हित करना चाहिये । मानवोंके कर्तव्योंमें ये दोनों कर्तव्य हैं । गौओंका हित भी मानवोंका हित करनेके लिये आवश्यक है ।

मर्य शब्दका प्रयोग

' मर्य ' शब्दके प्रयोगसे मरण धर्मवाले मानवोंका हित करनेका भाव जिन मंत्रोंमें बताया है, वे मंत्र अब देखेंगे ' मर्य ' शब्दका अर्थ ' मरनेवाला, मरण धर्मा ' है । ऐसे मरनेवाले मानवोंका हित करनेके कार्यमें जो तत्पर रहता है, उसको भी ' मर्यः ' (मर्येभ्यः हितः) मरनेवालोंका हित करनेवाला कहा जाता है । रोगियोंकी सेवा, दुर्बलोंकी सहायता, दीनोंका उद्धार करनेका कार्य करनेका भाव इस शब्दमें होता है । देखिये—

स हि क्रतुः स मर्यः स साधुः मित्रो न भूदद्भुतस्य रथीः । तं मेधेषु प्रथमं देवयन्तीर्विश उपब्रुवते दस्ममारीः ऋ० १।७७।३

' (सः क्रतुः) वह पुरुषार्थके कर्म करता है, (सः मर्यः) वह मानवोंका हित करनेके कार्य करता है, (सः साधुः) वह सदाचारी है, (मित्रः न) वह मित्रके समान सहायक होता है, (अद्भुतस्य रथीः) अपूर्व धनको रथमें रखकर लानेवाला है । (आरीः) प्रगतिशील (देवयन्तीः विशः) देवत्व प्राप्त करनेवाली प्रजा (तं मेधेषु प्रथमं दस्मं) उस यज्ञोंमें प्रथम वंदनीय सुन्दर देवकी (उप ब्रुवते) प्रशंसा करती है । ' यहां इस मंत्रमें ' क्रतुः, मर्यः साधुः ' ये पद हैं । (क्रतु) पुरुषार्थी हैं, साधना करनेवाले साधक ' साधु ' कहलाते हैं और मरनेवाली प्रजाका हित करनेमें जो तत्पर रहते हैं, वे ' मर्य ' कहलाते हैं । ' क्रतु ' और ' साधु ' के मध्यमें ' मर्य ' पद है । इसलिये इसका अर्थ ' क्रतु और साधु ' के साथ सुसंगत होना चाहिये ।

निर्दोष कार्यकर्ता

नरो मर्या अरेपसः । ऋ० ५।५३।३

' (अ-रेपसः) निष्पाप (नरः) मानव (मर्याः) मरण धर्मा मनुष्योका हित करते हैं । ' अर्थात् पापी लोग मनुष्योंका हित नहीं कर सकते । इस कारण सार्वजनिक कार्य करनेवालोंको उचित है कि वे अपना जीवन निष्पाप करें और सार्वजनिक हितके कार्य करें । जहां पापी लोग सार्वजनिक हितका कार्य करने लगेंगे, वहां उनकी पापी प्रवृत्तिके कारण उनका कार्य सदोष होगा और कार्यकी हानि होगी। इसलिये सार्वजनिक हित करनेके कार्य करनेवाले निष्पाप रहने चाहिये । और देखिये—

आयुभर सर्वजनहित करे

अग्निं विश्वायुवेपसं मर्यं न वाजिनं हितम् । सप्तिं न वाजयामसि । ऋ० ८।४३।२५

' (विश्व-आयु-वेपसं) संपूर्ण आयु पर्यंत बलके कर्म करनेवाले (मर्यं) मानवोंका हित करनेवाले और (हितं वाजिनं) हितकारी सामर्थ्यशाली पुरुषको (सप्तिं न) घोडेको जिस तरह शक्तिशाली बनाते हैं उस तरह अग्निको हम प्रदीप्त करते हैं । ' आयुभर जो सार्वजनिक हितके कार्य करता है, उसको बलवान बनकर रहना चाहिये । यदि वह निर्बल हुआ तो उससे सार्वजनिक कार्य नहीं होंगे ।

' विश्व-आयु-वेपसं हितं वाजिनं मर्यं वाजयामसि '

' सब आयुभर बलवर्धक कार्य करनेवाले हितकारी सामर्थ्यसे युक्त सार्वजनिक हितकर्ताका सामर्थ्य हम बढाते हैं । ' मनुष्य आयुभर बडे बडे कार्य करे, उनसे सार्वजनिक हित करे, उन कर्मोंको करनेके लिये सामर्थ्यवान बने और जो ऐसा सार्वजनिक हित करता है उसका सामर्थ्य लोग बढावें । उनका सामर्थ्य कम होने योग्य कोई कार्य न करे । और देखिये–

पाजस्वन्तो न वीराः पनस्यवो रिशादसो न मर्या अभिद्यवः । ऋ० १०।७७।३

' (पाजस्वन्तः वीराः) बलवान् वीर और (रिशादसः मर्याः) शत्रुका नाश करनेवाले सार्वजनिक हित करनेवाले

मनुष्य (अभिद्यवः) तेजस्वी होते हैं और (पनस्यवः) प्रशंसनीय होते हैं । ' वीर बलवान हों, शत्रुनाश करनेवाले हों, सार्वजनिक हित करनेवाले हों, तेजस्वी हों ईश्वरकी स्तुति उपासना करनेवाले हों । '

राजानो न चित्राः सुसंदृशः क्षितीनां न मर्या अरेपसः ॥ ऋ० १०।७८।१

' जैसे (अ-रेपसः मर्याः) जिस तरह निष्पाप लोग सार्वजनिक हितके कार्य करके शोभते हैं, वैसे ही (क्षितीनां राजानः) प्रजाजनोंके राजा लोग (चित्राः सुसंदृशः) सुन्दर दीखते हैं, शोभायमान होते हैं । ' निष्पाप लोग सर्वजन-हितकारी कार्यमें लग जानेसे शोभते हैं ।

मर्यादाके अर्थकी व्याप्ति

' मर्यादा ' पद बडा महत्वका भाव बताता है । (मर्य-आदा) मानवोंका हित करनेवाले पुरुषोंने जिसका स्वीकार किया है, वह ' मर्यादा ' है । धर्मकी मर्यादा, जनमर्यादा, आचारकी मर्यादा वह है कि जो सार्वजनिक हितके कार्य करनेवाले भद्र पुरुषोंने निश्चित की होती है ।

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासामेकामिदभ्यंहुरो गात् । ऋ० १०।५।६; अथर्व ५।१।६

ज्ञानियोंने सात मर्यादाएं निश्चित की हैं । इनमेंसे एकका भी उल्लंघन करनेवाला पापी होता है । ' (१) चोरी, (२) गुरुकी पत्नीके साथ अत्याचार करना, (३) ब्रह्महत्या, (४) भ्रूणहत्या, (५) सुरापान, (६) पापको पुनः पुनः करना, (७) पाप करनेपर उसको छिपानेके लिये असत्य भाषण करना ये सात मर्यादाएं हैं । ऐसा निरुक्त ६।२७ में कहा है । मनुस्मृतिमें सप्त पातकोंकी गणना इस तरह की है-

पानं अक्षाः स्त्रियश्चैव मृगया च यथाक्रमम् ।
एतत्कष्टतमं विद्यात् चतुष्कं कामजे गणे ॥ ५० ॥
दण्डस्य पातनं चैव वाक्यारुष्यार्थदूषणे ।
क्रोधजेऽपि गणे विद्यात् कष्टमेतत् त्रिकं सदा ॥५१॥
मनु० ७।५०-५१

कामज गणके चार पातक— (१) मद्यपान, (२) द्यूत, (३) व्यभिचार, स्त्रीविषयक अत्याचार, (४) मृगया ये हैं । क्रोधज गणके तीन पातक हैं- (१) कठोर दण्ड देना, (२) कठोर भाषण करना, गाली प्रदान, (३) पर द्रव्यका अपहार करना ये हैं । मिलकर ये सात पातक होते हैं : तथा पुनः—

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वंगनागमः ।
महान्ति पातकान्याहुः तत्संसर्गश्च पञ्चमम् ॥
मनु० ११।५४

' (१) ब्रह्महत्या, (२) सुरापान, (३) स्तेय, (४) गुरुकी स्त्रीके साथ गमन, और (५) इन पापियोंके साथ संसर्ग करना ये पांच महापातक हैं । ' गौतम धर्म सूत्रके अन्दर ये पातक गिने हैं—

ब्रह्म-सुराप-गुरुतल्पग-मातृपितृयोनिसंबन्धग-स्तेन-नास्तिक-निन्दितकर्माभ्यासि—
अपतितत्यागिनः पतिताः । गौतम धर्मसूत्र २१-१

(१) ब्रह्महत्या, (२) मद्यपान, (३) गुरुपत्नी गमन, (४) मातृपितृ संबंधियोंसे व्यभिचार, (५) चोरी, (६) नास्तिक मत स्वीकार, (७) निन्दित कर्मको बारंबार करना, (८) पतितको अपने आश्रयमें रखना, (९) शुद्ध पुण्यात्माको त्याग देना, ये पतित कहे जाते हैं । वसिष्ठ स्मृतिमें कहा है ।

गुरुतल्पं सुरापानं भ्रूणहत्या ब्राह्मणसुवर्णापहरणं पतितसंयोगश्च । वसिष्ठस्मृति २।१८।१९

(१) गुरुकी पत्नीके साथ गमन, (२) मद्यपान, (३) भ्रूणहत्या, (४) ब्राह्मणके धन या सुवर्णका अपहरण करना और (५) पतितके साथ संबंध करना । ये पातक हैं ।

इस तरह अनेक पातक कहे हैं । मनुस्मृति अ. ११ में अधिक वर्णन देखने योग्य है । इनका नाम ' मर्यादा ' है । ' मर्यैः या आदीयते ' मानवोंने अथवा मानवोंका हित करनेवालोंने जो स्वीकार की है वह मर्यादा है । यहांका ' मर्य ' शब्द मानववाचक माननेकी अपेक्षा ' सार्वजनिक हित करनेमें तत्पर रहनेवाले ज्ञानी पुरुष ' ऐसा मानना अधिक उचित है क्योंकि जो हीन पुरुष हैं, वे तो वे पातक करते ही हैं । मर्यादा तो वे लोग करते हैं कि जो इन पापोंसे दूर रहते हैं और जो मानवोंका सच्चा हित चाहते हैं ।

मर्यका अर्थ ।

(१) नरः नेतारः मर्याः मनुष्येभ्यो हिताः ॥
सायनभाष्य ५।५३।३

(२) मर्यासः मर्येभ्यो हिताः । सायण ५।६१।४

इस तरह 'मर्य' का अर्थ 'मानवोंके लिये हितकारक' कर्म करनेवाला ऐसा अर्थ भाष्यकार समय समय पर करते हैं।

पांचजन्य, नर्य और मर्य

यहां तक 'पांचजन्य, नर्य और मर्य' इन तीन पदोंका विचार हुआ। और वेदमंत्रोंमें इनके विषयमें जो कहा है, वह हमने देखा। ऊपर ऊपरसे देखा जाय, तो इन तीनों पदोंका अर्थ 'सर्वजनहित, या सार्वजनिक हित करनेवाला' ऐसा ही है। परंतु–

(१) 'पांचजन्य' पदमें 'ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और निषाद' अर्थात् 'ज्ञानी, शूर, व्यापारी, कर्मचारी और वन्य' वर्गोंका बोध होता है, इसलिये इन वर्गोंका हित पृथक् पृथक् देखनेका भाव इस 'पाञ्च-जन्य' पदमें है। पांचजन्यके कर्तव्यमें सर्वजनहित है, परंतु उसमें उसने पांचों वर्गोंका हित ठीक तरह हो रहा है या नहीं, यह मनन पूर्वक देखना चाहिये। यह कर्तव्यका भार कार्य-कर्तापर रहता है। जो पञ्चजनोंका हित करता है वह तो सब लोगोंका हित करता ही है, परंतु प्रत्येक वर्गकी ओर वह विशेष रीतिसे देखता है और प्रत्येक वर्गकी आवश्य-कताओंकी ओर देखना उसका कर्तव्य होता है। यह पाञ्च-जन्यकी विशेषता है। यहां सर्व साधारण जनहित करनेकी दृष्टि गौण है और प्रत्येक वर्गका हित करनेकी दृष्टि विशेष है।

(२) दूसरा पद 'नर्य' है। नरका विशेष अर्थ नेता है। जो मुख्य है, प्रमुख है। वर्गका जो प्रमुख है, जिसके आधीन बहुतसे लोग रहते हैं वह नर है। यह नर स्वार्थी भोगोंमें रमता नहीं (न-रमते) और अपने अनुयायियोंका हित करनेमें तत्पर रहता है। ऐसे नेताओंका हितसाधन करना यहां विशेष है। यह एक राज्य शासनकी व्यवस्था है। जो सुख साधन इन नेताओंको मिलेंगे, वे सब मानवों-तक निःसंदेह पहुंच जायंगे और इससे सब जनोंका हित होगा ही। यहां संघ और संघनेता ऐसी समाज व्यवस्थाकी कल्पना है। संघनेताके द्वारा यहां सब सुखसाधन संघ-बन्धुओंको पहुंचने हैं।

'नर' पदका अर्थ मनुष्य ऐसा भी है और इस अर्थको लेकर से 'नर्य' का अर्थ 'सब मानवोंका हित करनेवाला, ऐसा भी होता है, परंतु ऊपरका अर्थ यहां विशेष आदर-णीय है।

कैसा भी हो यह पद भी सब मानवोंका हित करनेका भार कार्यकर्ताओंपर रखता है। 'पाञ्चजन्य' और 'नर्य' इन दो पदोंसे जो भाव व्यक्त होता है वह यह है।

(३) अब 'मर्य' पद है। इसका वास्तविक अर्थ 'मरनेवाला' है। मरनेवालोंका हित करनेवाला यह इस पदका भाव है। मरनेवाले, रोगी, दीन, कृश, अपंग, दुर्बल जो हैं, उनका हित करना यहां मुख्य है। इनको ही मुख्यतः सहायता मिलनी चाहिये। क्योंकि वे स्वयं अपनी उन्नति करनेमें असमर्थ होते हैं। समाज सेवा करनेकी जो इच्छा करते हैं, वे इस पदका विचार करें। समाजसेवा तो इन दीनोंकी ही सेवा है। यदि सेवा करनी है और यदि समाजसेवा करनेका व्रत किसीने अपने जीवनमें डालना है, तो वह समाजसेवा इन दीन दुर्बल अपंग रोगियोंकी ही सेवा है।

इस तरह 'पांचजन्य, नर्य और मर्य' इन पदोंसे वेदने जो सर्वजन हित करनेका व्रत अपने जीवनमें डाल-नेका उपदेश किया है, वह इस व्याख्यानमें बताया है। केवल 'सार्वजनिक हित' इतना ही न कहते हुए वेदने कहा है कि 'पञ्चजनोंका हित करो, नरोंका हित करो, मर्त्योंका हित करो।' बात एक ही है, सब मानवोंका हित करनेका ही उद्देश्य है, परंतु उसमें कितनी बारीकी वेदमें कही है यह विचारकी दृष्टिसे देखनेका यत्न यहां करनेकी आवश्य-कता है। इस दृष्टिसे वेदका एक एक पद विशेष महत्त्वका प्रतीत होते हैं।

करोडों मानवोंका मिलकर जो एक विराट संघ है वही मानो परमेश्वरका विराट् देह है, वही 'सहस्रशीर्षा सहस्र नेत्र, सहस्रबाहु, सहस्रोदर, सहस्रजंघ और सहस्रपाद पुरुष है' करोडों प्राणियोंके जो सिर बाहु उदर और पांव हैं वे ही मानो उसके सिर बाहु उदर और पांव है। यह एक आलंकारिक पुरुष मानव समाजरूपी ही पुरुष है। यही सब मनुष्योंके लिये संसेव्य है।

सेवा किसकी होती है ?

पुत्र पिताकी सेवा करता है, उस समय पुत्र पिताके दुखी अवयवकी ही सेवा करता है। जिस अवयवमें दर्द है

उसकी मालिश की जाती है। जहां दुःख है, वहीं सेवाकी जरूरी रहती है। जो शरीरका अवयव ठीक कार्यक्षम है उसकी सेवा करनेकी आवश्यकता नहीं है। जो निर्बल है, रोगी है उसीकी सेवा करनी चाहिये।

इसी विचारसरणीसे पता चल सकता है, कि मानव समाज रूपी विराट् पुरुषके शरीरमें जहां दुःख होता होगा, वहीं सेवा करनेकी आवश्यकता है। जो मानव दीन, दुखी, रोगी, कृश, अपंग, निराधार, बेकार, हीन, क्षीण हैं उनकी सेवा करनी चाहिये। जो धनवान्, सामर्थ्यवान्, अधिकार संपन्न, ऐश्वर्यके शिखरपर विराजमान हैं वे अपने सामर्थ्यसे ही जितने चाहिये उतने नौकर चाकर प्राप्त कर सकते हैं। परंतु जो गरीब हैं, रोगी हैं, उनको बिना मूल्य औषध देना चाहिये, जो निरक्षर हैं उनको साक्षर बनाना चाहिये। जो बेकार हैं उनको काम देना चाहिये। यह सेवाका क्षेत्र है।

सर्वजन हितका कार्य किस तरह करना चाहिये, उसके कर्ताकी योग्यता कैसी होनी चाहिये, उसके साधन क्या हैं, उसके सहायक कौन हो सकते हैं, इत्यादि सभी बातोंके अनेक निर्देश इस व्याख्यानमें दिये मंत्रोंमें पाठक देख सकते हैं। इनका मनन करनेसे सर्वजन हितका कार्य कौनसा किस तरह करना चाहिये इसका ज्ञान पाठकोंको हो सकता है। आशा है कि पाठक इस महत्वपूर्ण विषयका अच्छी तरह मनन करेंगे और आवश्यक बोध प्राप्त करेंगे। और सर्वजन हित करनेका व्रत अपने जीवनमें ढालकर अपनेको कृतकृत्य बनायेंगे।

अनुक्रमणिका

१ राष्ट्र एक पुरुष है	१	१७ नरोंका हित करनेवाला नर्य	७
२ व्यक्तिशः भिन्नता और राष्ट्रशः अनन्यता	,,	१८ निःस्वार्थी कर्मचारी	९
३ शरीरके अवयव	२	१९ जनहितकारी वीर पुत्र	११
४ शरीरमें क्या हो रहा है ?	,,	२० तीन कार्यकर्ता	,,
५ राष्ट्रहितके तीन भेद हैं	,,	२१ वीर पुत्रका निर्माण	१२
६ पञ्चजनोंका हित	,,	२२ मातापिताकी शरीरकी पवित्रता	,,
७ नरोंका हित	३	२३ मानव हितकारी रथ	१३
८ मर्त्योंका हित	,,	२४ हितकारी धन	,,
९ पञ्चजनोंका हितसाधन	,,	२५ मानवोंमें श्रेष्ठ	१४
१० ऋषिलोग पञ्चजनोंका हित करते थे	,,	२६ मर्य शब्दका प्रयोग	१५
११ पञ्चजनोंके हितके लिये राज्यक्रांति	,,	२७ निर्दोष कार्यकर्ता	,,
१२ पञ्चजनोंका हित करनेवाला धन	४	२८ आयुभर सर्वजनहित करे	,,
१३ पञ्चजनोंका हितकर्ता राजा	५	२९ मर्यादाके अर्थकी व्याप्ति	१६
१४ पञ्चजनोंकी अनुकूलतामें राजाका सामर्थ्य	,,	३० मर्यका अर्थ	,,
१५ प्रत्येकका संरक्षण,	६	३१ पांचजन्य, नर्य, और मर्य	,,
१६ प्रभावी वक्तृत्व शक्ति	,,	३२ सेवा किसकी होती है ?	,,